P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

उत्तराखण्ड लोक संगीत के सुषिर वाद्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेश चन्द्र पाण्डे
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
संगीत विभाग,
एम० बी० रा० स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
हल्द्वानी (नैनीताल),
उत्तराखण्ड, भारत

सारांश

लोक संगीत आज भी प्रकृति के उन्मुक्त एवं स्वच्छन्द वातावरण में पुष्पित व पल्लवित हो रहा है और आज भी कृत्रिमता से दूर है। लोक संगीत में वाद्य की प्रमुखता सदैव से ही रही है अर्थात लोक संगीत गति प्रधान है । वाद्य वास्तव में है क्या? कोई भी ऐसी वस्तु जो ध्वनि उत्पन्न करती है अर्थात जिसका प्रयोग ध्वनि उपकरणों के रूप में कर सकते है किन्तु वह ध्वनि संगीत उपयोगी मधुर ध्वनि होनी चाहिए, वाद्य कहलाते है। वाद्य संगीत का आभूषण है यह कहा जा सकता है संगीत यदि पुष्प है तो वाद्य उसकी सुगंध और यदि संगीत सुगन्ध है तो वाद्य उसकी आत्मा। कुमाऊँ उत्तराखण्ड राज्य का एक महत्वपूर्ण रमणीय उत्तरीय पहाड़ी क्षेत्र है कुमाऊँ यह ऋषियों तथा देवों की तपोभूमि कहलाता है। विष्णु भगवान का दूसरा कुर्मू अवतार के कारण इसका नाम कुर्मांचल पड़ा। कुमाऊँ सम्पदा का धनी है कुमाऊँ के कोने कोने में लोक कला अपने विभिन्न रूपों में बिखरी पड़ी है।

मुख्य शब्द : वंशी, कुमाऊँ, मशकबीन, मुरली, शंख।

प्रस्तावना

लोक संगीत को भाव एवं गति प्रदान करने में लोक वाद्यों का विशेष महत्व है पारम्परिक लोक संगीत की समस्त विधाओं को अपने चरम में लाने में लोक वाद्य पूर्ण रूप से सक्षम हैं। उत्तराखण्ड लोक संगीत में यहाँ प्रयुक्त होने वाले सुषिर वाद्य लोक संगीत के सौन्दर्य को और अधिक बढ़ा देते हैं।

मुरली

मुरली वंशी का ही एक भेद है तथा पर्वतीय अचंल का प्रमुख लोक वाद्य है। प्राचीन वैदिक ग्रन्थों के अनुसार वंछी के स्वरों को आधार लेकर ही वीणा के तार स्वरों में मिलाये जाते थे। नारदीय शिक्षा में कहा गया है –

'यह सामगानां प्रथमः स्वरः स वेणोर्मध्यमः'

भरत नाट्य शास्त्र में वंशी का महत्व वर्णित है जो मुरली के समान है। संगीत ग्रन्थों के अतिरिक्त महाभारत श्रीमद भागवत आदि ग्रन्थों में भगवान श्री कृष्ण की प्रिय वंशी का वर्णन उपलब्ध है। भगवान श्री कृष्ण की लीला का वर्णन करने वाला कोई भी कवि ऐसा नहीं जिसने वंशी के कोमल रसीले मनोमुग्धकारी स्वरों और उनके प्रभावों का वर्णन न किया हो।

वंशी के कई भेद है तथा "संगीत रत्नाकर", "संगीत सार" में इसका वर्णन है। संगीत रत्नाकर में वंशी वृन्द वादन का भी उल्लेख प्राप्त होता है जिसमें अनेक वंशी वादक सामूहिक रूप से वंशी वादन करते है। इसका नाद अत्यन्त मनोहारी होता है।

कुछ प्रवर्ती आचार्यो ने इसे "मारगी मुरली" के नाम से भी सम्बोधित किया है। वैदिक साहित्य में मुरली के लिए "वेणू" शब्द का अधिक प्रयोग हुआ है तथा वेणू ही वह पुरातन एवं सर्वप्रथम वाद्य है जिसमें संगीत के सात स्वरों का स्वर विभाजन हुआ।

कुमाऊँ में मुरली को लोक गीतों, लोक नृत्यों के साथ संगत वाद्य के रूप में बजाया जाता है। शास्त्रीय संगीत की बांसुरी की तरह यह आड़ी न बजाकर सीधे शहनाई की तरह बजाई जाती है। कुमाऊँ की प्रसिद्ध लोक धुन "न्योली" जिसमें विरह की पीढ़ा को गायक द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है मुरली पर ही इसकी धुन बजाई जाती है। जिससे हृदय की विरह वेदना उभर कर आती है और धुन विरह की पीढ़ा का द्योतन करती है। इसका वादन एकल रूप में किया जाता है गीत के प्रारम्भ में इसकी मधुर तान बजाई जाती है। जो पहाड़ी क्षेत्रों के प्रत्यक्ष दर्शन कराती है।

पर्वतीय क्षेत्र में प्राचीन काल से ही परम्परागत मुरली (बांसुरी) बांस की न होकर रिंगाल की बनाई जाती है। रिंगाल पर्वतीय अचंल में 7000 फिट से

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

8000 फिट की उँचाई में उगने वाला एक पेड़ है। इसके तने की मोटाई बांसुरी के बराबर होती है। अक्टूबर–नवम्बर में जब रिंगाल परिपक्व हो जाता है तब उन्हे काटकर सुखाने के लिए रख दिया जाता है। इन तनों को 1.5 फुट काटकर टुकड़े कर लिया जाता है जिन्हें डंक कहा जाता है, जिनसे कारीगर मुरली बना लेते है। मुख्यतः इसका प्रयोग पुरूषों द्वारा होता है अर्थात् यह पुरूष प्रधान वाद्य है। वर्तमान में भी लोकगीतों में इसका प्रयोग होता है।

मशकबीन

लोक वाद्यों के बीच रच बस कर मशकबीन पर्वतीय अंचल के एक प्रमुख लोक वाद्य का स्थान प्राप्त कर चुका है किन्तु कुछ विद्वानों की धारणा है कि यह एक विदेशी वाद्य है किन्तु वर्तमान में मसकबीन मेले, छोलिया नृत्य एवं फौजी बैण्ड में बजाया जाता है कुमाऊँ रेजीमेण्ट में कुमाऊँनी प्रसिद्ध गीत ''बेडू पाको बारूमासा'' की धुन मशकबीन में ही बजाई जाती है। कुमाऊँनी प्रसिद्ध लोक नृत्य छोलिया में इसका प्रयोग किया जाता है। इसी की धुन पर नृत्यकार प्रर्दशन करते है। मशकबीन का मुख्य भाग एक चमड़े का थैलीनुमा मशक होता है इसमें पांच छेद करके चार छेदों पर पिपरियां लगाई जाती है मशक को बजाते समय बगल में दबाया जाता है एक नली से मुह द्वारा हवा भरी जाती है। इस फूंक मारने वाली नली के अन्दर पीपरी नहीं लगी होती दूसरी पीपरी वह है जिससे वादक बांसुरी की तरह आवश्यक धुन निकालते है। इस बांसुरी को चंडल कहते है। चंडल का प्रयोग बांसुरी की तरह विभिन्न प्रकार से धुन व गीत बजाने के लिए किया जाता है।

तुरही

यह अति प्राचीन लोक वाद्य है। प्राचीन सामन्ती काल में युद्ध भूमि की ओर प्रयाण करते समय व युद्ध भूमि में योद्धाओं का उत्साह बढाने के लिए इस वाद्य का प्रयोग किया जाता था यह ढोल, नगाड़े के साथ बजने वाला सहायक लोक वाद्य है वर्तमान में इसका प्रयोग छोलिया नृत्य के साथ साथ मांगलिक कार्यो के अवसर पर भी किया जाता है।

शंख

शंख मुख्यतः देवपूजन के साथ मंगल कार्यो में ध्वनि के लिए किया जाता है। पूजा के प्रारम्भ में एवं समापन में शंख ध्वनि दी जाती है। पैराणिक मान्यता के अनुसार जब सुर व असुरों द्वारा समुद्र मंथन किया गया था उनमें एक रत्न शंख भी था।

महाभारत के युद्ध में जब कौरव व पाण्डवों की सेना युद्ध के समय आमने सामने खडी थी तब युद्ध के प्रारम्भ में योद्धाओं ने शंखनाद किये। सर्वप्रथम भीष्म पितामह ने सर्वप्रथम उच्च स्वर में शंखनाद किया। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के शंखों की चर्चा भगवत गीता में मिलती है। जैसे– शंखों में कृष्ण ने पंचजन्य नामक, अर्जुन नें धनन्जय नामक, भीम ने पौण्ड नामक, युधिष्टर ने अनन्त विजय नामक, नकुल ने सुधोष नामक, सहदेव ने मणिपुष्पक नामक व अन्य सभी योद्धाओं ने अपने–अपने हाथों में शंख नाद द्वारा युद्ध का ऐलान किया। इस तरह हम शंख को युद्धभूमि में वीरों का उत्साह बढ़ाने वाला वाद्य भी मान सकते है। कुमाऊँ में जागर आदि धार्मिक अनुष्ठानों में शंख का विशेष प्रयोग किया जाता है, और सामान्य रूप सभी घरों में प्राप्त होता है।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

रणसिंग

संगीत रत्नाकर, संगीत परिजात, संगीत सार आदि से श्रंग वाद्य का वर्णन मिलता है। संगीत परिजात में लिखा है–

श्रृंग्ाकारेण श्रंग् श्यान्माहिषस्येव धातुजम्।
तस्यास्यमोष्ठदेशे तु स्वरान्नियुज्य नादयेत्।।
स्वरैरूग्रतरैः कृत्वा रणसिगांभिधा मता।
कण्ठोद्भवाः स्वरा एव श्रृगे् तज्ञिमल्फलन्ति हि।।

तात्पर्य यह है कि सींग को श्रंग कहते है या यह धातु का भी बना हो सकता है।

हमारे प्राचीन ग्रन्थों पुराणों में रणसिंह का उल्लेख मिलता है जैसे किसी देवता की असुरों पर विजय के समय, वीर राजाओं के स्वागत के समय, मांगलिक कार्यो में आदि । युद्ध से पूर्व इसके नाद से युद्ध की घोषणा, वीर रस उत्पन्न करने वाला वाद्य माना जाता है। तथा आज भी यह अपने मूल रूप में विद्यमान है। वर्तमान में इसे छोलिया नृत्य, शादी विवाह, शुभ मांगलिक अवसरों पर बजाया जाता है।

अप्रचलित वाद्य

नागफणी

यह वाद्य तांबे व पीतल से बना तुरही के समान वाद्य है जिसका आगे का हिस्सा या मुँह नाग या सर्प के मुँह की तरह बना होता है। नाग की तरह मुँह होने के कारण इसे नागफणी कहते है।

इसमें वादक को फूंक मारने में बेहद कष्ट होता होगा क्योकि बनावट टेढ़ी–मेढ़ी नाली की तरह होती है फूक सीधी न जाकर बीच में रूक जाती होगी जिससे इसका वादन सरल नहीं होता होगा। अब इस वाद्य का प्रचलन नहीं है तथा यह लुप्त वाद्य है।

भौकर

यह तांबें का बना लोक वाद्य है इसकी लम्बाई 4 से 5 फिट तक होती है इसे मुँह से फूंककर बजाया जाता है पहले जमीन की ओर तथा फिर ऊपर उठाकर फूँक मारी जाती है जिससे भौ, पौं की आवाज निकलती है। कुमाऊँ के मंदिरों में इसे जोड़ों के साथ रखा जाता है तथा इन्हें प्रकृति पुरूष जोड़े के रूप में माना जाता है और आरती के समय बजाया जाता है। मुख्य रूप से इसका प्रयोग देवी काली के मंदिर में होता है।

इसकी लम्बाई अधिक होने के कारण वादक को इसके लिए भारी फूंक की आवश्यकता होती होगी और इसके वादन में कोई विभिन्नता एवं नवीनता नहीं होने के कारण यह विलुप्त हो गया है। अब इसका प्रचलन नहीं के बराबर है।

जौया मुरली

जौया का अर्थ कुमाऊँनी में जुड़वा है तथा दो मुरलियां आपस में जुड़ी रहती है इसलिए इस वाद्य का नाम जौया मुरली रखा गया। इसे बजाना कठिन है एक मुरली आधार स्वर के लिए तथा दूसरी से धुन का निर्माण किया जाता है। जो बेहद कठिन है।

प्रचलित मान्यथा के अनुसार जीवन व बृहम के संयोग का रूप है तथा पुरूष प्रधान वाद्य है जो अब प्रचलन में नही है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. लुप्त प्रायः सुषिर वाद्यों का वर्णन ।
2. सुषिर वाद्यों का लोक गीतों में प्रयोग एवं महत्व ।
3. सुषिर वाद्यों की संरचना।

शोध प्रविधि

1. लोक कलाकारों के साक्षात्कार
2. ग्रामीण इलाकों में भ्रमण।
3. लोक ग्रन्थों का पठन–पाठन

निष्कर्ष

कोई भी लोक संगीत वाद्य के बिना अधूरा है जिस प्रकार (सोने पर सुहागा) सुहागिन स्त्री के द्वारा आभूषण ग्रहण करने पर आभूषणों की शोभा और अधिक बढ़ जाती है ठीक उसी प्रकार लोक गीतों में वाद्यों की संगति होने से उसकी महत्ता ओर अधिक बढ़ जाती है। संगीत की धुन के साथ वाद्य यंत्रो की साझेदारी किसी भी परिस्थिति या रचना को और अधिक मनोरंजक बना देती है। वाद्य यंत्रों की बात की जाये तो हमारे देश में कई प्रकार के वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता है जिसके अन्तर्गत तबला, ढोलक, सितार, हारमोनियम इत्यादि। शास्त्रीय संगीत की अपेक्षा लोकगीतों में अधिक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है तथा प्रत्येक राज्य के अपने लोक वाद्य होते है जो उस राज्य की लोक संस्कृति को बताते है।

वाद्यों को गीतों का आधार माना जाता रहा है। विभिन्न वाद्यों का प्रयोग लोक गीत एवं नृत्यों मे किया जाता है जिससे कार्यक्रम की रंजकता और अधिक बढ़ जाती है किन्तु सुषिर वाद्यों में केवल मुरली और मशकबीन का प्रमुख प्रयोग होता है। मुरली कुमाँऊनी संस्कृति को दर्शाने का प्रमुख सुषिर वाद्य है तथा मशकबीन कुमाऊँ की परम्परा बन चुका है अन्य सुषिर वाद्य जैसे– रणसिंह, तुरही, आदि का भी प्रचलन है किन्तु कुछ वाद्य अपनी बनावट एवं वादन विधि की कठिनता के कारण लुप्त होते चले गये जैसे– नागफणी, भौकर, जौया मुरली इनका प्रचलन अब लोक जीवन में नहीं है। इससे स्पष्ट होता है कि लोक संगीत के लिए सरल एवं आकर्षक होना अति आवश्यक है जो सरलता से लोक जीवन में रच बस जाये, वही लोक वाद्य कहलाते हैं तथा प्रचार में रहते हैं और निरन्तरता बनी रहती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

नाट्य शास्त्र– भरत मुनि।
"संगीत रत्नाकर–शारंग देव।
भारतीय संगीत वाद्य –डॉ0 लालमणी मिश्र, भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली
प्राचीन भारत में संगीत –डॉ0 धर्मावती श्रीवास्तव, विद्या प्रकाशन वाराणसी
गढ़वाल का लोक संगीत एवं वाद्य – डॉ0 सिवानन्द नौटियाल, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली
परिदृश्य उत्तराखण्ड संस्कृति, साहित्य एवं कला परिषद, सोमवारी लाल उत्तराखण्ड प्रकाशन–2005
उत्तराखण्ड के लोक वाद्य जुगल किशोर पेटशाली, तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली 2002